जैन बालपोथी

भाग 1

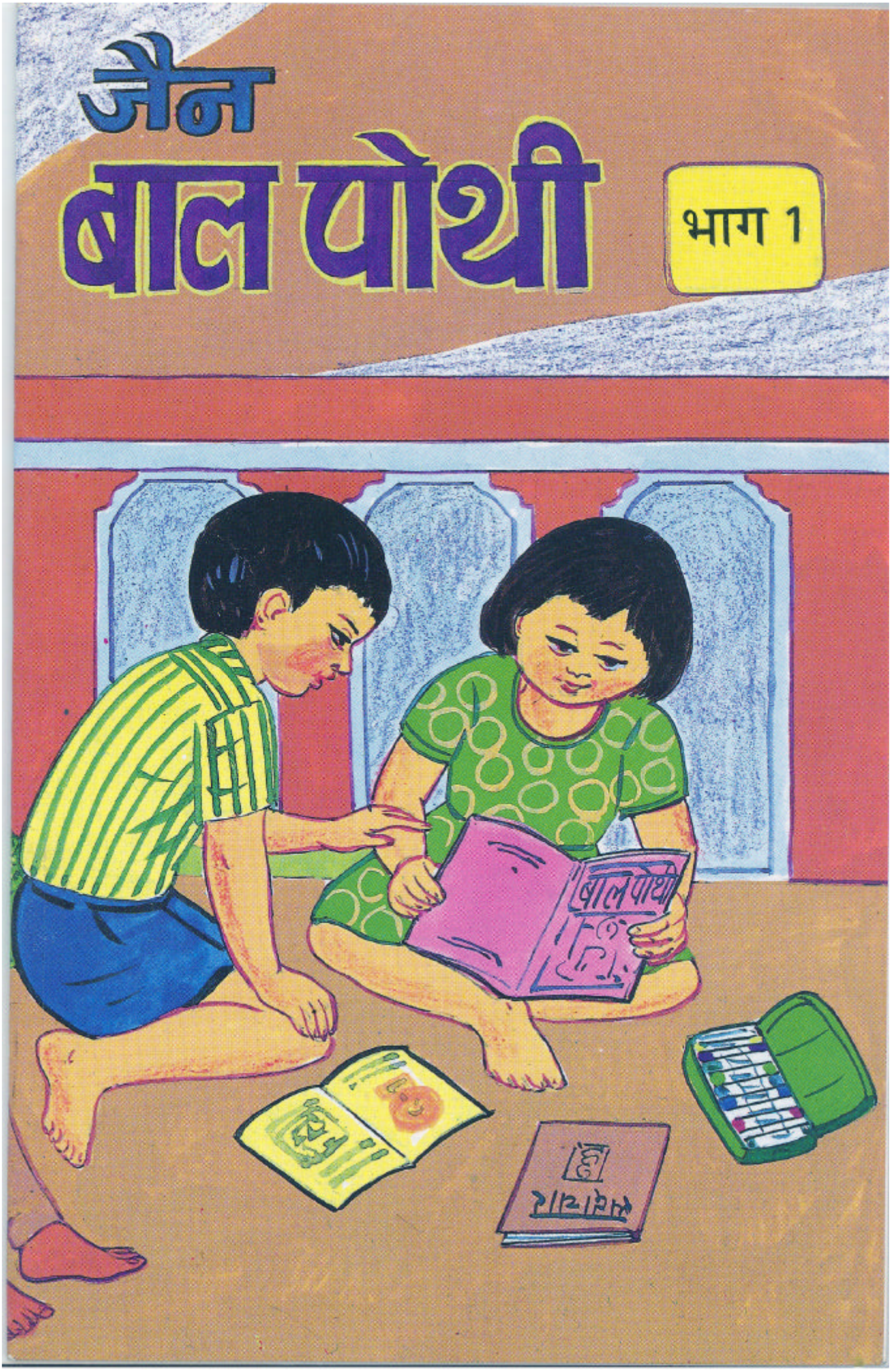

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जैन बालपोथी

भाग-1

लेखक :
स्व. ब्र. हरिभाई

प्रकाशक :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन : 707458, 705581

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

हिन्दी :

प्रथम पन्द्रह संस्करण : 77 हजार 200

सोलहवाँ संस्करण : 3 हजार

(2 अक्टूबर, 2003)

योग : 80 हजार 200

गुजराती :

नौ संस्करण : 43 हजार

मराठी :

चार संस्करण : 19 हजार

कन्नड :

दो संस्करण : 10 हजार

अंग्रेजी :

तीन संस्करण : 15 हजार

महायोग : 1 लाख 67 हजार 200

मूल्य : चार रुपया

मुद्रक :

मार्केटिंग एण्ड सेल्स एसोसिएट्स

बाईस गोदाम

जयपुर

Thanks & Our Request

This shastra has been kindly donated by Dakshaben Sanghvi, Geneva, Switzerland who has paid for it to be "electronised" and made available on the internet.

Our request to you:

1) Great care has been taken to ensure this electronic version of Jain Balpothi Part 1 (Hindi) is a faithful copy of the paper version. However if you find any errors please inform us on rajesh@AtmaDharma.com so that we can make this beautiful work even more accurate.

2) Keep checking the version number of the on-line shastra so that if corrections have been made you can replace your copy with the corrected one.

Version History

Version Number	Date	Changes
001	26 April 2009	First electronic version

प्रकाशकीय

जैन बालपोथी भाग - 1 का नवीन संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें अतीव प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। आठ दस वर्ष के बालक भी रुचि पूर्वक तत्त्वज्ञान का अभ्यास कर सकें इस हेतु से यह 'जैन बाल पोथी' दो भागों में तैयार की गई है।

अभ्यास करने में बालकों का मन लगे ऐसे ढंग से इसमें छोटे-छोटे पाठों द्वारा जीव-अजीव, द्रव्य-गुण-पर्याय, धर्म, देव-गुरु-शास्त्र, पंच-परमेष्ठी, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र - शिकार त्याग, जैनधर्म, मुक्त और संसारी, जीव और कर्म, भगवान महावीर का जीवन चरित्र, देव-दर्शन, हिंसादि पापों के त्याग का उपदेश, क्रोधादि के त्याग का उपदेश, कीर्तन संचय, देव-शास्त्र-गुरु को वंदन, आत्मदेव का वर्णन और वैराग्य भावनाएँ आदि विषयों को समाहित किया गया है।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक पाठ में विषय के अनुसार चित्र भी दिए गये हैं, जिससे बच्चों को रोचकता प्रतीत होगी।

इस बालपोथी के पाठ बालकों को केवल कंठस्थ कराने के लिए ही नहीं है, अपितु बालकों को प्रत्येक पाठ का भाव समझाकर उसका अभ्यास कराना चाहिए और चित्रों के माध्यम से उसका हृदयंगम कराना चाहिए। कीर्तन, देव-दर्शन आदि पाठों को क्रियात्मक रूप में सिखाना चाहिए।

यह पुस्तक हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़ तथा अंग्रेजी भाषा में अब तक 1 लाख 64 हजार 200 की संख्या में प्रकाशित हो चुकी है। हिन्दी भाषा में इसका यह सोलहवाँ संस्करण है जो 3000 की संख्या में प्रकाशित किया गया है। इस कृति के माध्यम से सभी बालक शुद्धात्म दशा को प्राप्त हों, ऐसी कामना है।

- ब्र. यशपाल जैन

प्रकाशन मंत्री

विषय-सूची

क्रम	विषय	पृष्ठ
01.	जीव	01
02.	शरीर	02
03.	जीव और अजीव	03
04.	द्रव्य-गुण-पर्याय	04
05.	परीक्षा	05
06.	हाँ और ना	06
07.	धर्म	07
08.	समझ	08
09.	भगवान	09
10.	गुरु	10
11.	शास्त्र	11
12.	जैन बालक का हालरिया	12
13.	सम्यग्दर्शन	14
14.	सम्यग्ज्ञान	15
15.	सम्यक्चारित्र	16
16.	जैन	17
17.	राजा की कहानी	18
18.	मुक्त और संसारी	19
19.	जीव और कर्म	20
20.	श्री महावीर भगवान	21
21.	इतना करना	25
22.	अच्छी-अच्छी शिक्षाएँ	26
23.	कभी नहीं	27
24.	धुन	28
25.	वन्दन	29
26.	आत्मदेव	30
27.	मुझे बताओ	31
28.	मेरी भावना	32

बालकों से

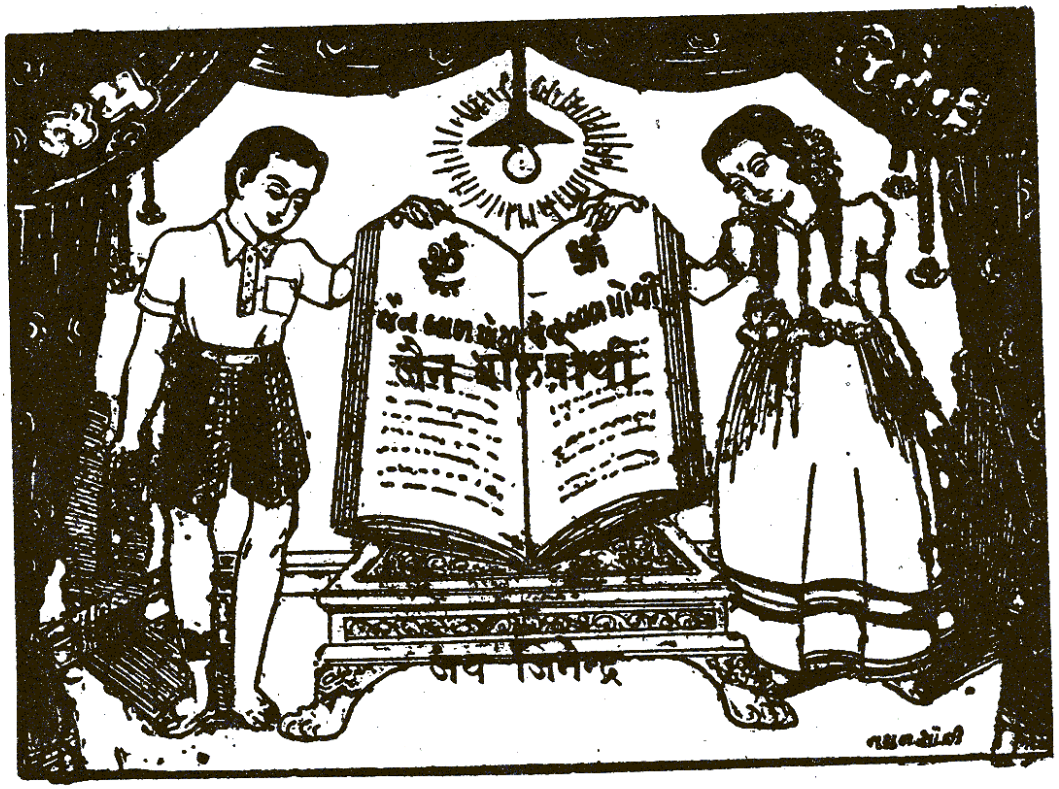

धर्मप्रेमी बालको !

तुम भगवान महावीर की संतान हो।

तुम्हारे हाथों में यह बालपोथी देखकर

किसको आनन्द नहीं होगा ?

तुम इसे प्रेम से पढ़ना।

पढ़ने के लिए हमेशा पाठशाला जाना।

आत्मा को समझ कर तुम भी भगवान बनना।

वीर प्रभु की हम संतान

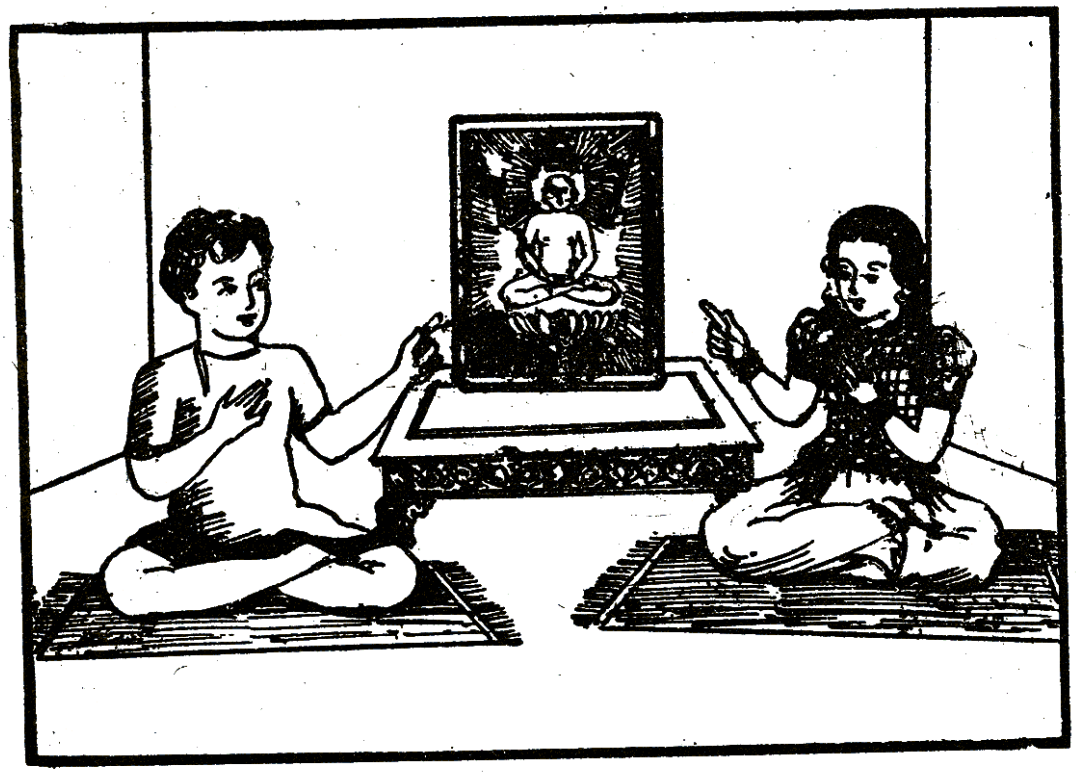

वीर प्रभु की हम संतान।
धारें जिन सिद्धान्त महान्।
समझें पढ़ने में कल्यान।
गावें गुरुवर का गुणगान।। वीर.।।
पढ़ कर बनें वीर विद्वान,
पावें निश्चय आतम-ज्ञान।
गुरु उपकार हृदय में आन,
उनको नमें सहित सम्मान।। वीर.।।

पाठ : 1

जीव

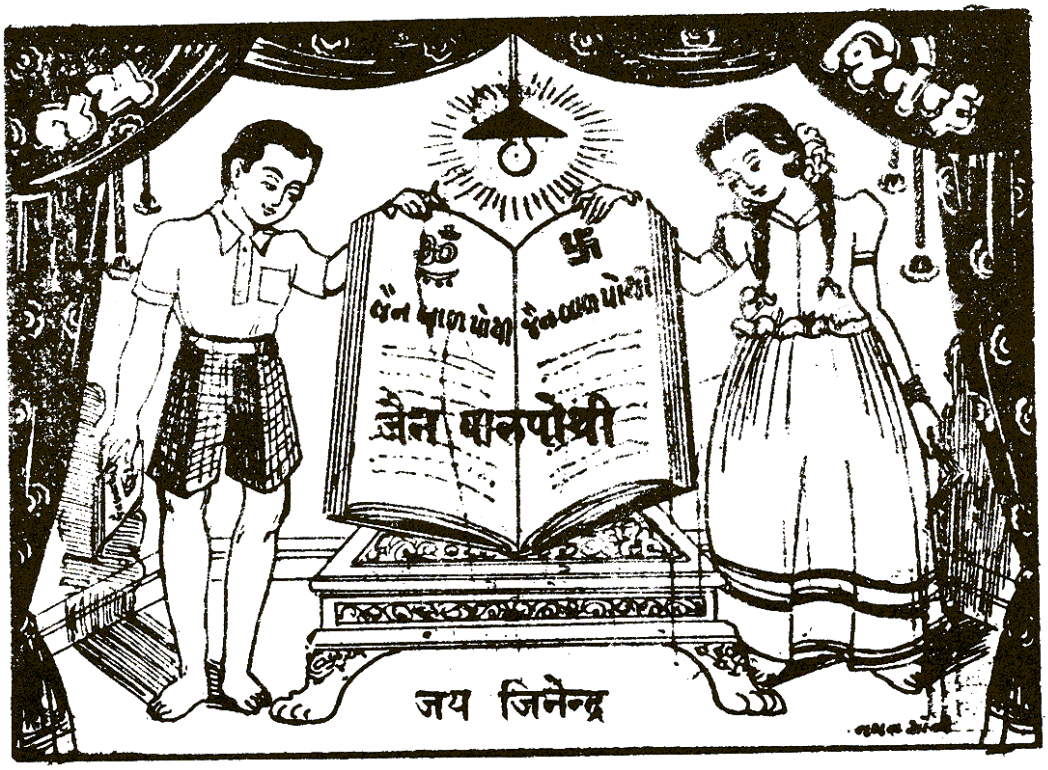

मैं जीव हूँ।

मुझ में ज्ञान है।

मैं ज्ञान से जानता हूँ।

पाठ : 2

शरीर

शरीर अजीव है।

उसमें ज्ञान नहीं है।

वह कुछ जानता नहीं है।

पाठ : 3

जीव और अजीव

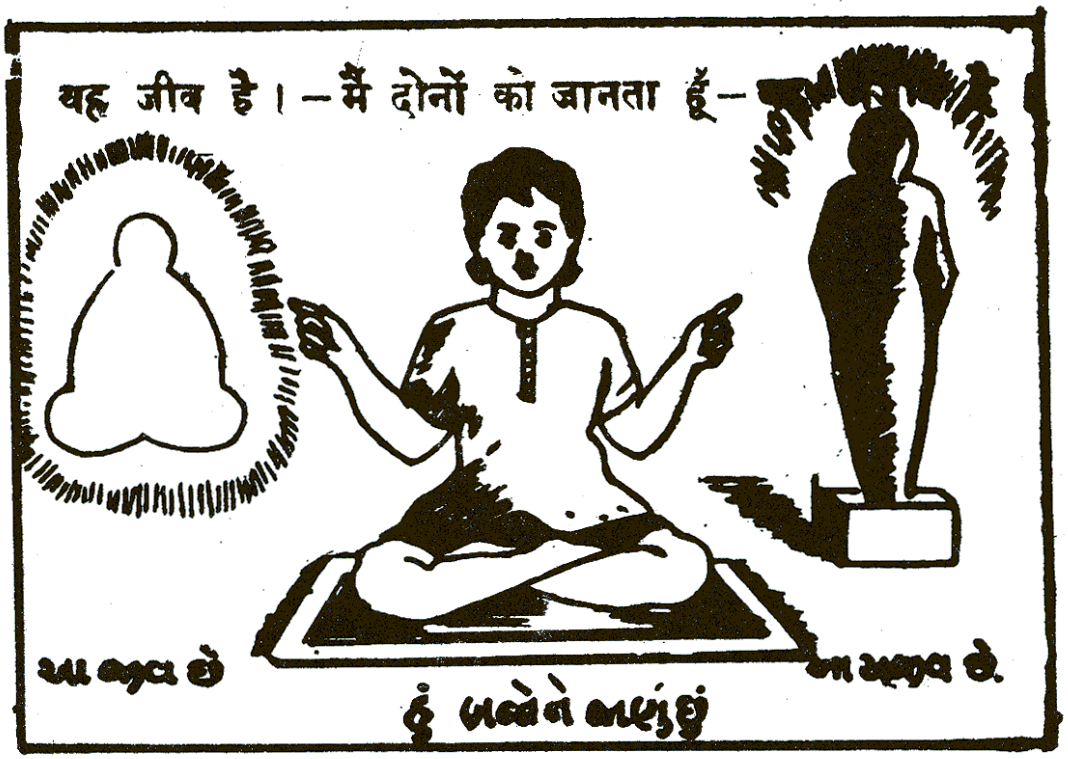

मैं जीव हूँ।

शरीर अजीव है।

जीव में ज्ञान है।

अजीव में ज्ञान नहीं है।

मुझ में ज्ञान है।

शरीर में ज्ञान नहीं है।

मैं अपने ज्ञान से सबको जानता हूँ।

शरीर किसी को नहीं जानता।

जीव और शरीर अलग अलग हैं।

पाठ : 4

द्रव्य-गुण-पर्याय

मैं जीव-द्रव्य हूँ।

ज्ञान मेरा गुण है।

जानना मेरी पर्याय है।

जीव-द्रव्य में ज्ञान-गुण है।

अजीव-द्रव्य में ज्ञान-गुण नहीं है।

जीव-द्रव्य जानता है।

अजीव-द्रव्य नहीं जानता।

पाठ : 5

परीक्षा

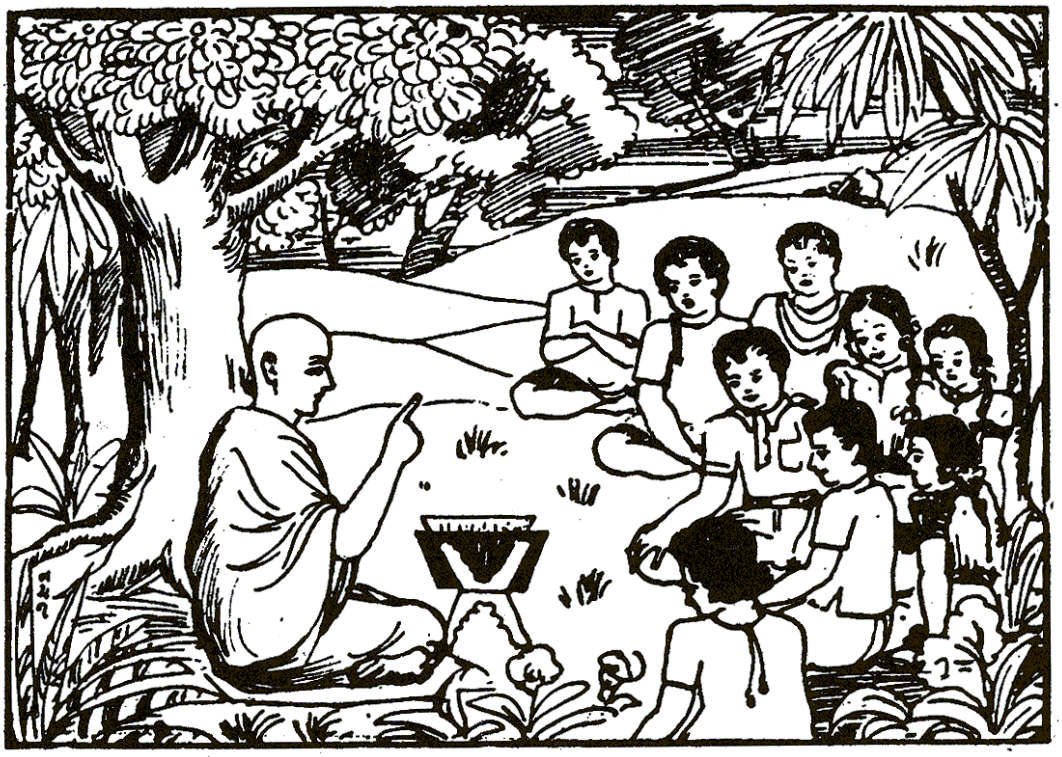

बालको !

बताओ तुम कौन हो ? – जीव, जीव, जीव।

तुम्हारे में क्या है ? – ज्ञान, ज्ञान, ज्ञान।

तुम क्या करते हो ? – जानते हैं, जानते हैं, जानते हैं।

शरीर कौन है ? – अजीव, अजीव, अजीव।

क्या उसमें ज्ञान है ?– नहीं, नहीं, नहीं।

क्या वह किसी को जानता है ? – नहीं, नहीं, नहीं।

क्या शरीर तुम्हारा है ?– नहीं, नहीं, नहीं।

क्या शरीर का काम तुम करते हो ? – नहीं, नहीं, नहीं।

पाठ : 6

हाँ और ना

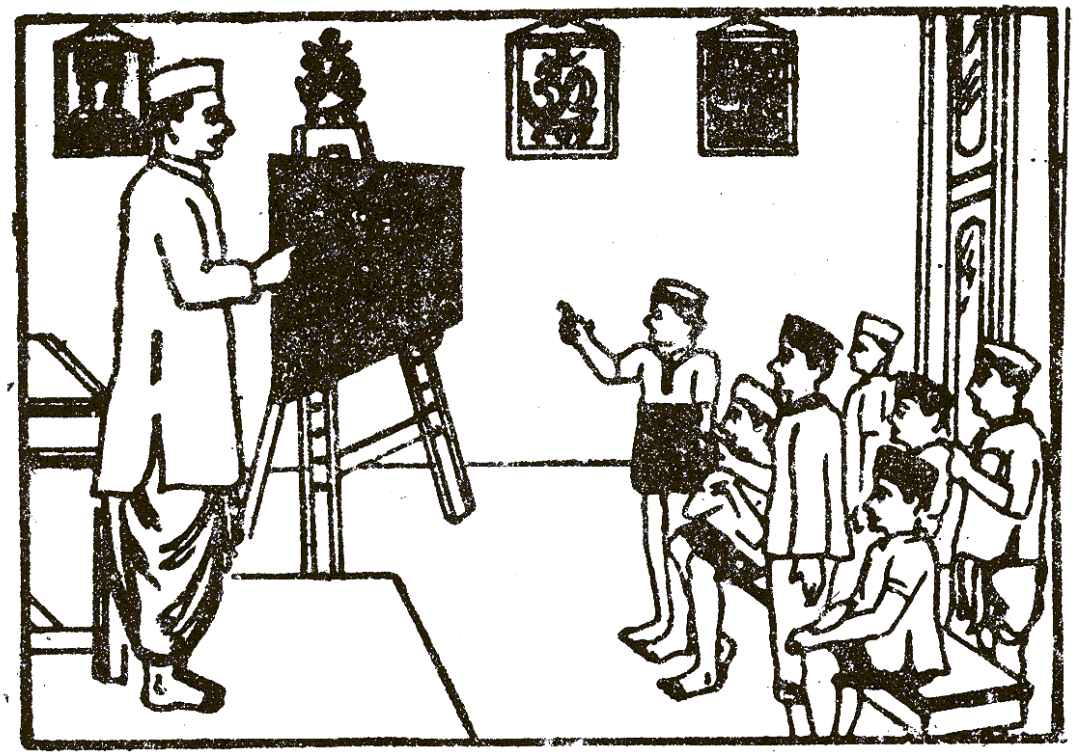

बताओ –

तुम जीव हो ? – हाँ, हाँ, हाँ।

शरीर जीव है ? – ना, ना, ना।

तुम्हारे में ज्ञान है ? – हाँ, हाँ, हाँ।

शरीर में ज्ञान है ? – ना, ना, ना।

तुम सब को जानते हो ? – हाँ, हाँ, हाँ।

शरीर कुछ जानता है ? – ना, ना, ना।

तुम शरीर को जानते हो ? हाँ, हाँ, हाँ।

तुम शरीर का काम करते हो ? – ना, ना, ना।

तुम्हें सुखी होना है ? – हाँ, हाँ, हाँ।

तुम्हें दुखी होना है ? – ना, ना, ना।

तुम आत्मा को पहिचानोगे ? – हाँ, हाँ, हाँ।

तुम अज्ञानी रहोगे ? – ना, ना, ना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

धर्म

मुझे सुखी होना है।

जो धर्म करता है वह सुखी होता है।

जो धर्म नहीं करता है वह दुःखी होता है।

मुझे धर्म करना है।

जीव में धर्म होता है।

शरीर में धर्म नहीं होता।

मैं जीव हूँ, मुझ में धर्म होता है।

शरीर अजीव है, उसमें धर्म नहीं होता।

जीव एक द्रव्य है।

धर्म उसकी पर्याय है।

पाठ : 8

समझ

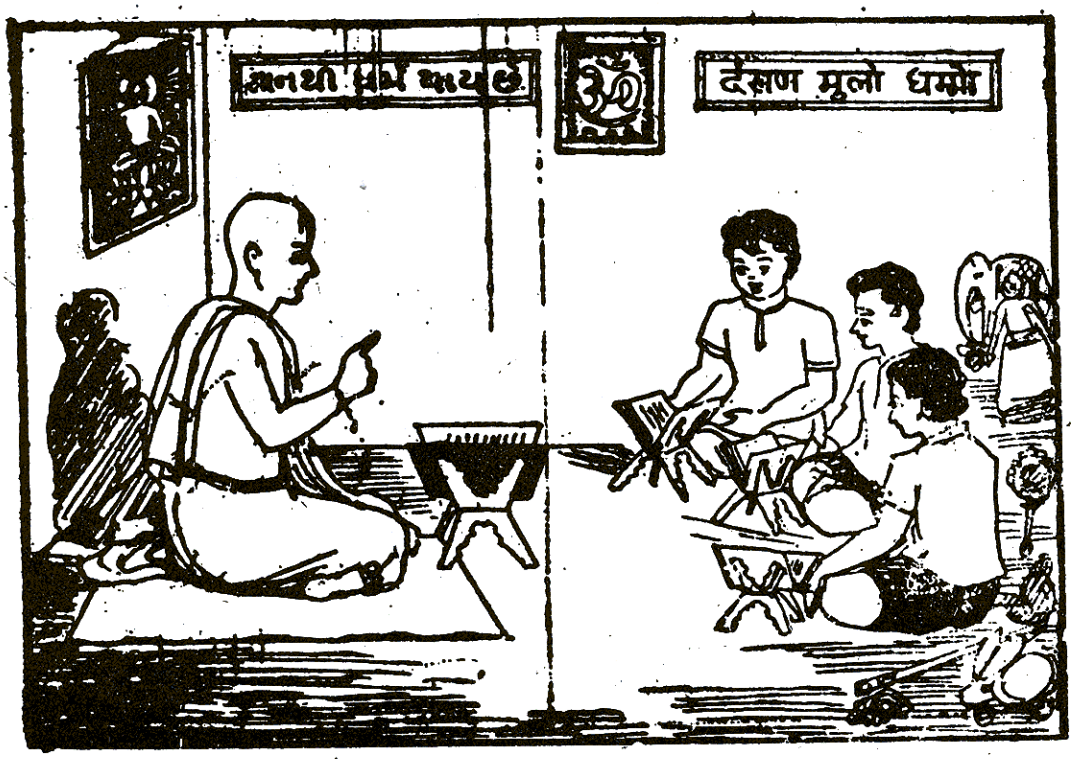

ज्ञान से धर्म होता है।

अज्ञान से अधर्म होता है।

जिसमें ज्ञान होता है वह धर्म को समझता है।

जीव में ज्ञान है। जीव धर्म को समझता है।

शरीर में ज्ञान नहीं है। शरीर धर्म नहीं समझता।

मैं जीव हूँ।

मुझ में ज्ञान है।

मैं अपने ज्ञान से धर्म को समझता हूँ।

भगवान

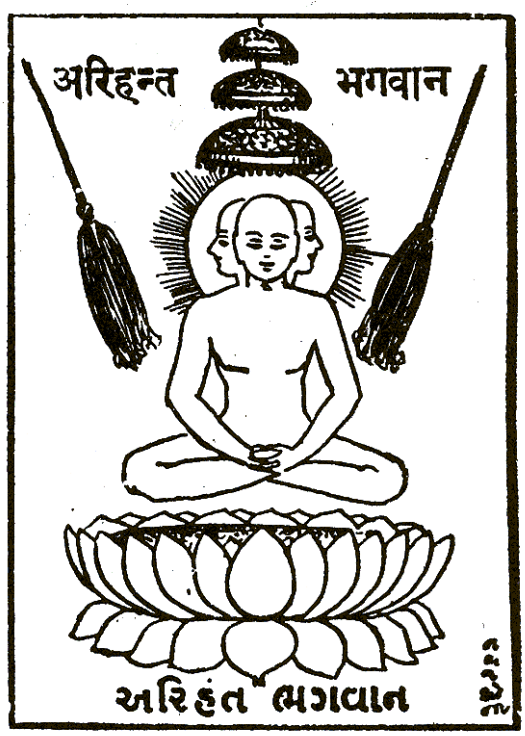

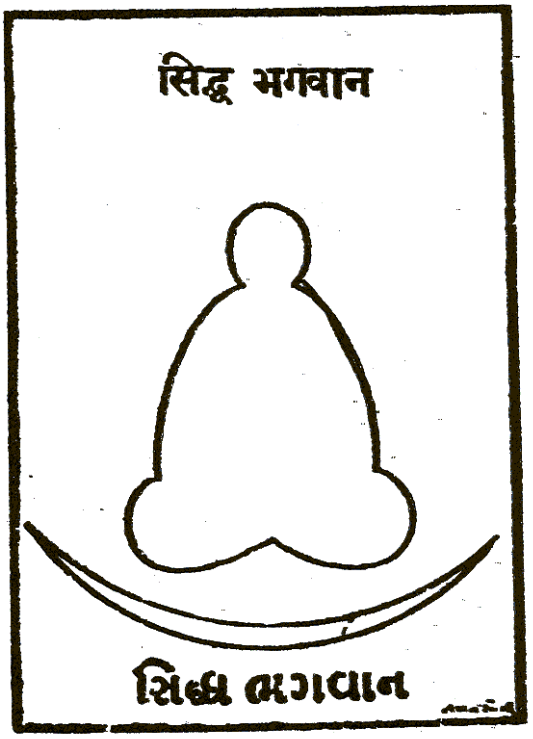

'णमो अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं।'

धर्म अर्थात् आत्मा की समझ।

जो आत्मा को समझता है वह भगवान होता है।

भगवान को पूरा ज्ञान होता है।

भगवान को तनिक भी राग नहीं होता।

भगवान सब को जानते हैं।

भगवान किसी का कुछ भी नहीं करते।

भगवान को भूख नहीं लगती।

भगवान कुछ नहीं खाते।

'अरिहन्त' भगवान हैं। 'सिद्ध' भगवान हैं।

महावीर भगवान सिद्ध हैं।

सीमंधर भगवान अरिहंत हैं।

अरिहंत के शरीर होता है। सिद्ध के शरीर नहीं होता।

प्रतिदिन भगवान के दर्शन करना चाहिए।

पाठ : 10

गुरु

'णमो आइरियाणं। णमो उवज्झायाणं।
णमो लोए सव्वसाहूणं।'

इधर एक मुनि हैं। मुनि हमारे गुरु हैं।

वे आत्मा के ध्यान में बैठे हैं।

पास में कमण्डल और पीछी है।

सच्चे मुनि को आत्मज्ञान होता है।

कुन्दकुन्द मुनि आचार्य थे।

आचार्य भी मुनि हैं, उपाध्याय भी मुनि हैं, साधु भी मुनि हैं।

सब मुनि हमारे गुरु हैं।

गुरु हम को धर्म का उपदेश देते हैं।

सदा गुरु के दर्शन तथा उनकी विनय और भक्ति करना।

पाठ : 11

शास्त्र

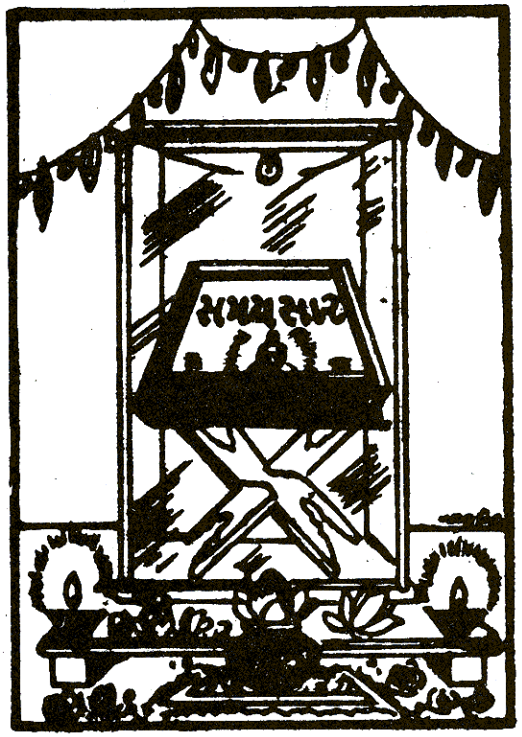

यह समयसार है। यह एक शास्त्र है।
शास्त्र आत्मा को समझाते हैं।
जिसकी ज्ञानी रचना करें वह शास्त्र है।
उस शास्त्र से आत्मा की पहिचान होती है।
जिसे अज्ञानी बनायें वह कुशास्त्र है।
उससे आत्मा की पहिचान नहीं होती।
शास्त्र में ज्ञान नहीं है। वह कुछ जानता नहीं है।
जीव में ज्ञान है। जीव सब कुछ जानता है।
समयसार-शास्त्र बहुत अच्छा है।
इससे आत्मा का ज्ञान होता है।
कुन्दकुन्द आचार्य ने इसकी रचना की है।
सदा शास्त्र का दर्शन और स्वाध्याय करना चाहिये।

पाठ : 12

जैन बालक का हालरिया (लोरी)

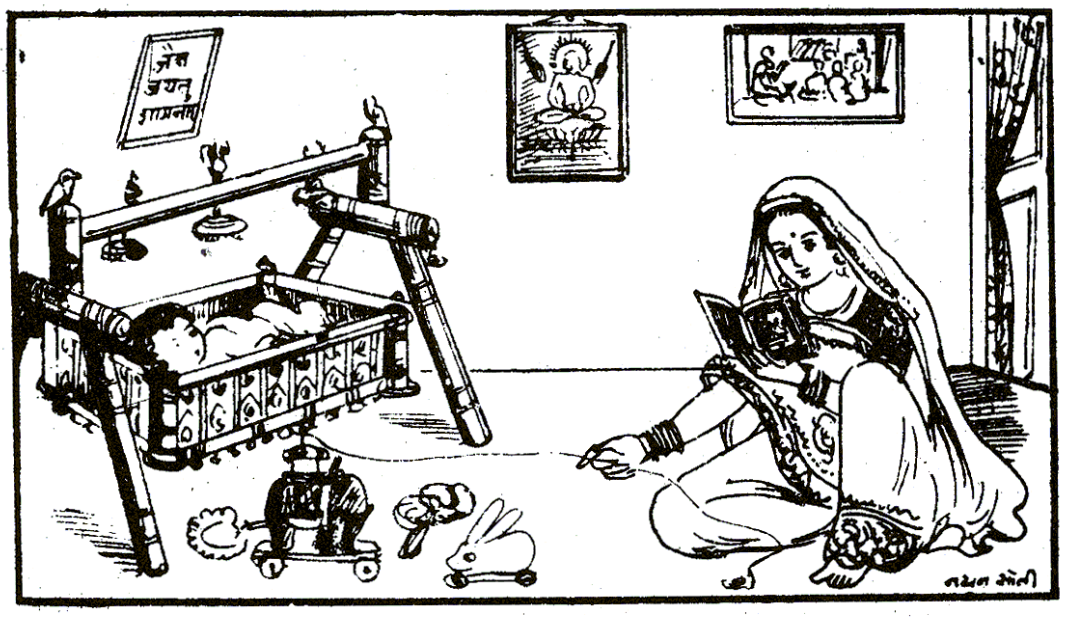

'अरिहन्त' पिता जी तेरे, 'जिनवाणी' माता तेरी,
मेरे भैया ! अरिहन्त सहज है होना।

'प्रभु सिद्ध' पिता जी तेरे, 'जिनवाणी' माता तेरी,
मेरे भैया ! प्रभुसिद्ध सहज है होना।

'आचार्य' पिता जी तेरे, 'जिनवाणी' माता तेरी
मेरे भैया ! 'आचार्य' सहज है होना।

'उपाध्याय' पिता जी तेरे, 'जिनवाणी' माता तेरी,
मेरे भैया ! 'उपाध्याय' सहज है होना।

'मुनिराज' पिता जी तेरे, 'जिनवाणी' माता तेरी,
मेरे भैया ! 'मुनिराज' सहज है होना।

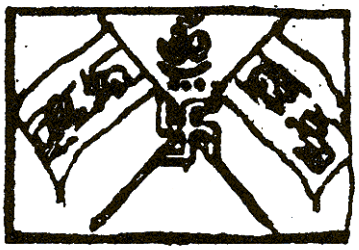

'जिनशासन' धर्म तुम्हारो, स्वाभाविक मर्म सँभारो।
मेरे भैया ! 'जिनधर्म' सहज है समझना।

सम्यग्दर्शन

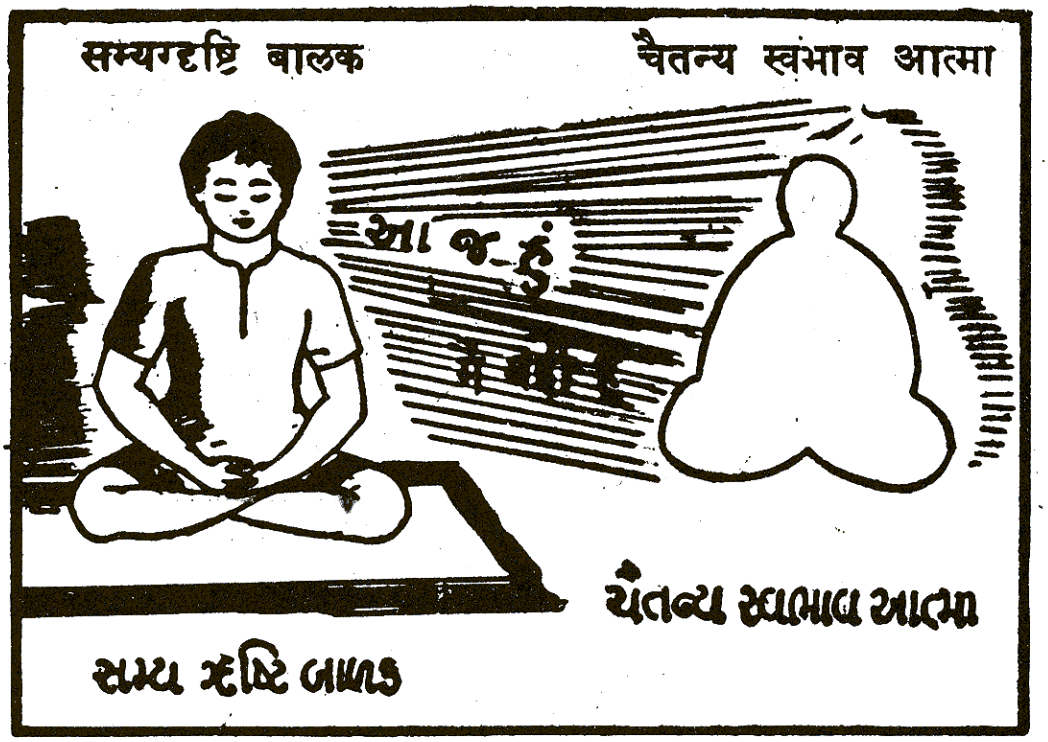

सम्यग्दर्शन अर्थात् सच्ची श्रद्धा।

सच्ची श्रद्धा अर्थात् आत्मा का विश्वास।

अपना आत्मा पूरा है, अपना आत्मा भगवान है।

अपने आत्मा का विश्वास करे तो सम्यग्दर्शन हो।

सम्यग्दर्शन हो तो अवश्य मोक्ष हो।

सम्यग्दर्शन धर्म का मूल है।

सम्यग्दर्शन प्रत्येक जीव के लिए बहुत आवश्यक है।

सम्यग्दर्शन के बिना ही जीव संसार में भटकता है।

सम्यग्दर्शन के बिना कभी भी धर्म नहीं होता।

आत्मा की सच्ची श्रद्धा ही सब से पहला धर्म है।

आत्मा की झूठी श्रद्धा ही सब से बड़ा पाप है।

सब से पहले क्या करोगे ?

'सम्यग्दर्शन का अभ्यास।'

सम्यग्ज्ञान

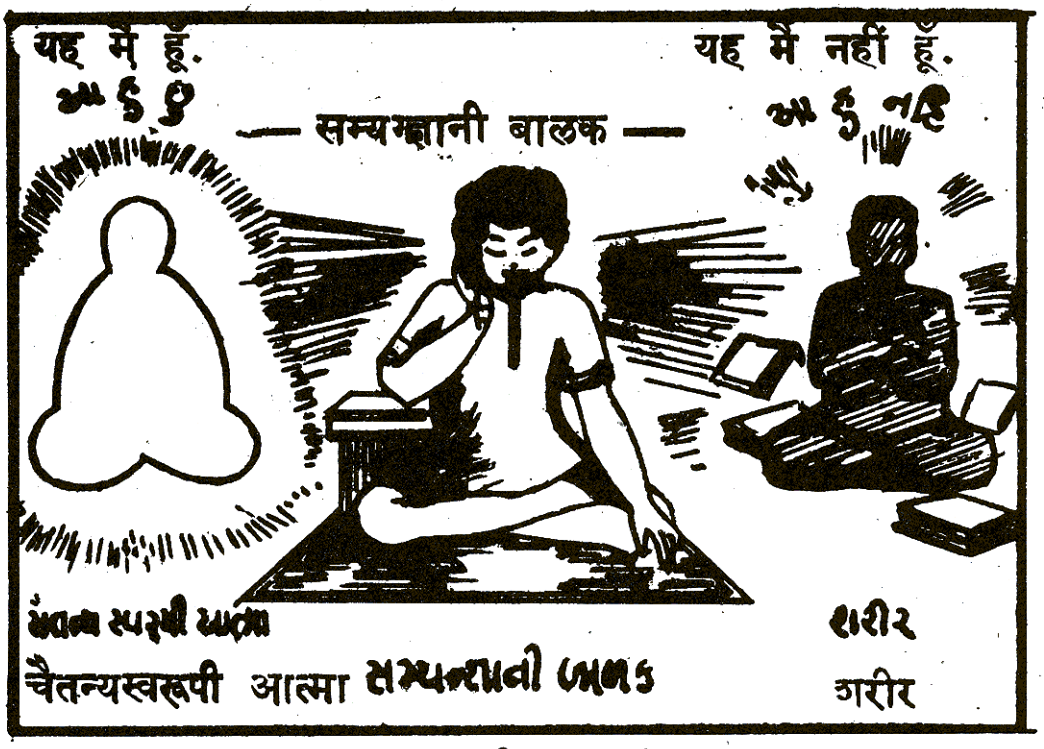

सम्यग्ज्ञान अर्थात् सच्ची समझ।
सच्ची समझ अर्थात् आत्मा की पहचान।

'आत्मा ज्ञानवाला है, आत्मा शरीर से अलग है,
जीव को राग होता है, वह उसका गुण नहीं है।'
– ऐसा समझे तो सच्चा ज्ञान हो।
सच्चा ज्ञान हो तब झूठा ज्ञान हटे।
सच्चा ज्ञान हो तब सुख प्रगटे।
सच्चा ज्ञान हो तब धर्म हो।
सच्चा ज्ञान हो तब संसार से छूटे।
सच्चा ज्ञान हो तब आप भगवान हो।
सच्चा ज्ञान ही सब से पहला धर्म है।
अज्ञान ही सबसे बड़ा पाप है।
तुम क्या करोगे ?
'आत्मा का सच्चा ज्ञान और अज्ञान का नाश।'

सम्यक्चारित्र

सम्यक्चारित्र अर्थात् सच्चा आचरण।
आत्मा को पहचान कर उसमें रहना सो सम्यक्चारित्र है।
जो आत्मा को पहचाने उसके ही सच्चा चारित्र होता है।
जो आत्मा को नहीं पहचाने उसके सच्चा चारित्र नहीं होता।
सम्यक्चारित्र सम-भाव है। सम्यक्चारित्र शान्ति है।
सम्यक्चारित्र धर्म है।
जिसके सम्यक्चारित्र हो उसे मुनि कहा जाता है।
सम्यक्चारित्र से शीघ्र मोक्ष होता है।
पहले सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान, पीछे सम्यक्चारित्र।
सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र, तीनों मिलकर
मोक्ष का मार्ग है और किसी तरह से भी मोक्ष नहीं होता।
बालको ! तुम भी आत्मा की पहचान करके
सम्यक्चारित्र की भावना करो।

जैन

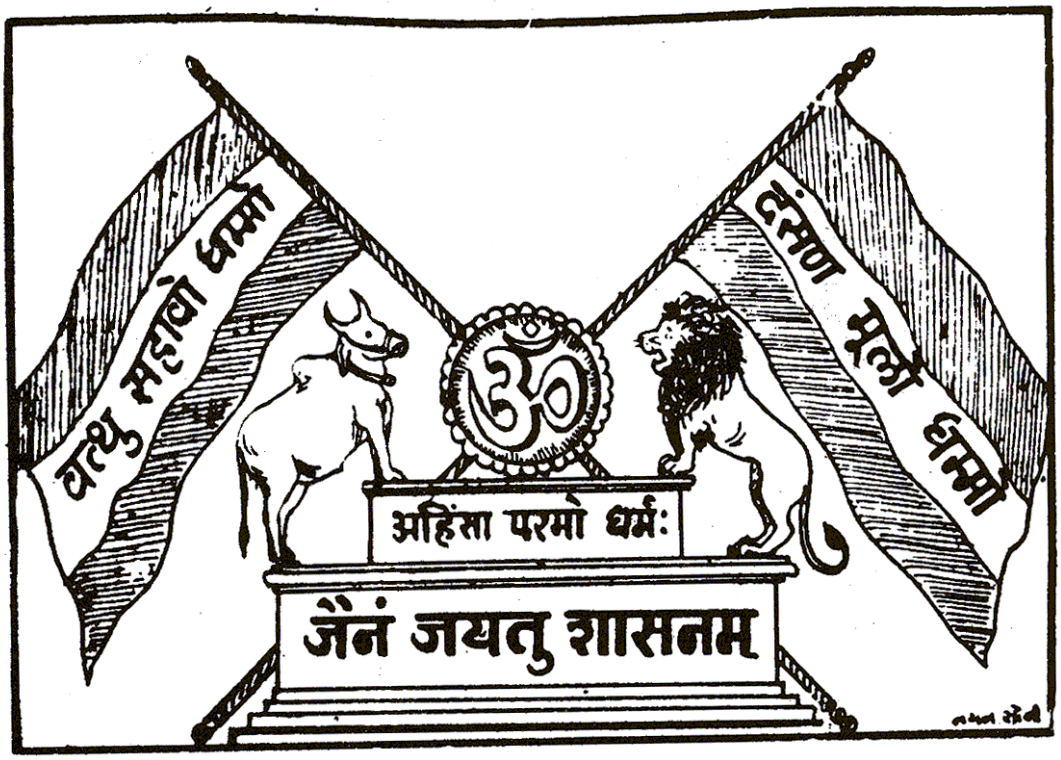

जैन अर्थात् जीतने वाला

जैन अर्थात् आत्मा का स्वभाव।

जो आत्मा को पहचाने सो जैन कहलाये।

जो आत्मा को नहीं पहचानता वह जैन नहीं कहला सकता।

आत्मा को पहचान कर जो अज्ञान को जीते सो जैन।

आत्मा के वीतराग-भाव से जो राग-द्वेष को जीते सो जैन।

जिसने राग-द्वेष को दूर किया है वह जिनदेव है।

जिनदेव ही सच्चे भगवान हैं।

भगवान सर्वज्ञ हैं, भगवान वीतराग हैं।

जैन मांस नहीं खाते। जैन मधु (शहद) नहीं खाते।

जैन मदिरा नहीं पीते।

जैनधर्म अनेकांतवादी है।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

राजा की कहानी

एक था राजा। वह जंगल में शिकार करने गया। जंगल में एक मुनिराज थे। राजा ने उनको नमस्कार किया। मुनिराज ने कहा – 'हे राजन्! शिकार करने से पाप होता है। पाप से जीव नरक में जाता है; वहाँ वह बहुत दुखी होता है।

यह सुनकर राजा रो पड़ा और मुनिराज से पूछा – 'प्रभो! मेरा पाप कैसे दूर हो और मैं कैसे सुखी होऊँ?'

मुनिराज ने कहा – 'हे राजन्! सुख तेरे आत्मा में ही है। तू शिकार करना छोड़ दे और आत्मा की पहचान कर, इससे तू सुखी होगा।'

इसके बाद राजा ने शिकार करना छोड़ दिया और मुनिराज के पास रहकर आत्मा की पहचान की तथा सुखी हुआ। अन्त में वह संसार से छूटकर मोक्ष में गया।

बालको! पाप छोड़ो, आत्मा को समझो तो सुखी होओगे।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

पाठ : 18

मुक्त और संसारी

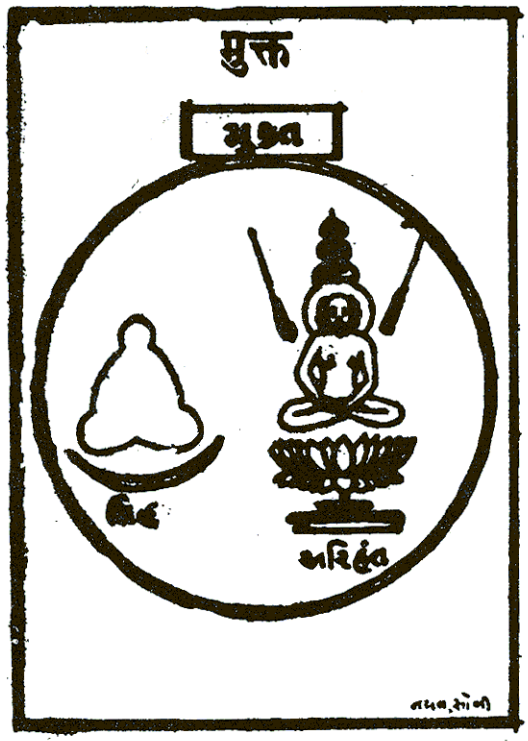

जीव दो तरह के हैं – एक मुक्त और दूसरे संसारी।

मुक्त जीव शुद्ध हैं, संसारी जीव अशुद्ध हैं।

मुक्त जीव मोक्ष में रहते हैं, उनको पूरा सुख प्राप्त है।

उनके राग-द्वेष नहीं होता, उनके जन्म-मरण नहीं होता।

वे कभी संसार में नहीं आते, वे दूसरों का कुछ भी नहीं करते।

सिद्ध भगवान मुक्त जीव हैं।

अरिहन्त भगवान भी जीवन्मुक्त हैं।

संसारी जीवों के जन्म-मरण होता है।

स्वर्ग के जीव संसारी हैं, नरक के जीव संसारी हैं।

तिर्यंच के जीव संसारी हैं और मनुष्य के जीव भी संसारी हैं।

संसारी जीव दुखी हैं; मुक्त जीव सुखी हैं।

आत्मा को न पहिचाने तब तक जीव संसार में भटकता है।

यदि आत्मा को पहिचाने तो अवश्य मुक्ति पाता है।

पाठ : 19

जीव और कर्म

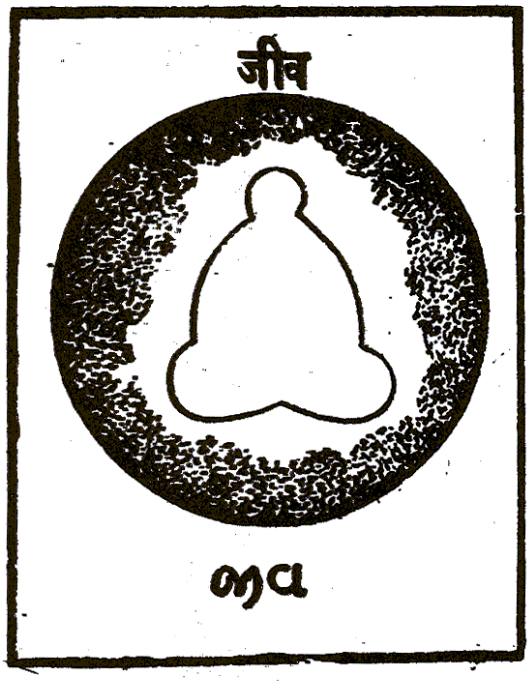

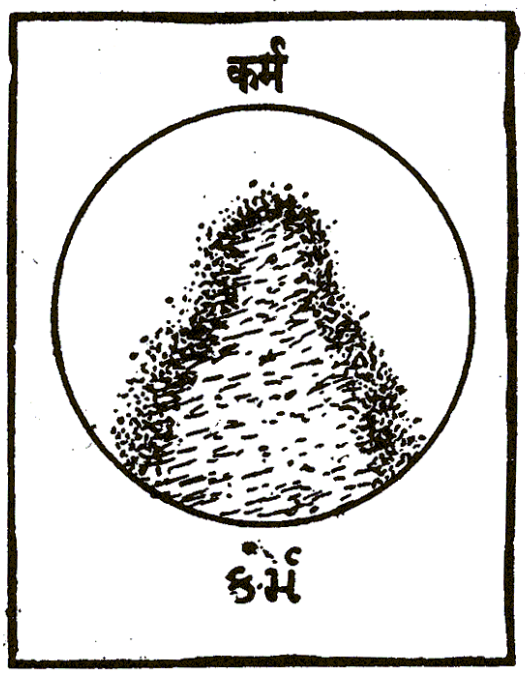

कर्म अजीव हैं।

कर्म में ज्ञान नहीं है।

जीव में ज्ञान है।

जीव और कर्म अलग हैं।

जीव में कर्म नहीं।

कर्म में जीव नहीं।

जीव अज्ञान से हैरान होता है।

कर्म जीव को हैरान नहीं करते।

जीव अपनी भूल से दुखी होता है।

कर्म जीव को दुखी नहीं करते।

जीव की पहचान करना चाहिए।

कर्म का दोष नहीं निकालना चाहिए।

जीव को पहचानना धर्म है।

कर्म का दोष निकालना अधर्म है।

पाठ : 20

श्री महावीर भगवान

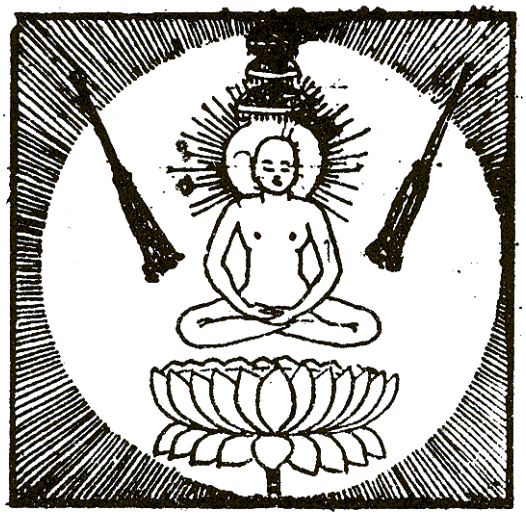

क्या तुम भगवान महावीर को पहचानते हो ? जैसे तुम आत्मा हो, वैसे ही महावीर भगवान भी एक आत्मा हैं। उन्होंने आत्मा की पहिचान की और राग-द्वेष को दूर किया। इसी से वे भगवान हुए।

यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम भी भगवान हो जाओगे।

'महावीर' के पिता जी का नाम सिद्धार्थ राजा और माता का नाम त्रिशला देवी था। उनका जन्म चैत्र सुदी 13 के दिन कुण्डलपुर नगर में हुआ था। जन्म से ही वे महान् आत्मज्ञानी और वैरागी थे। स्वर्ग से देव उनकी सेवा करने आते थे और छोटे-छोटे बालकों का रूप धारण कर उनके साथ खेलते थे।

खेलते हुए एक दिन एक देव ने बड़े सर्प का रूप बनाया और सब बालकों को डराने लगा, किन्तु महावीर ने उसे उठाकर दूर फैंक दिया।

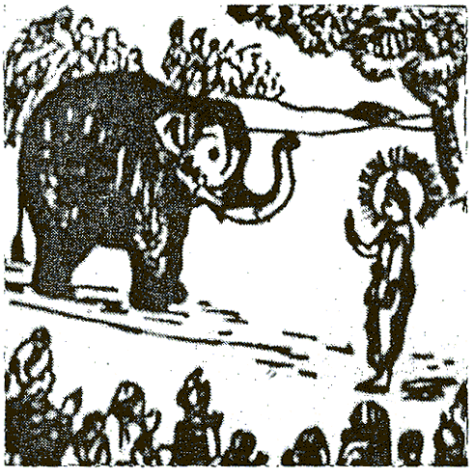

फिर एक बार राजा का हाथी पागल होकर भागा और लोगों को परेशान करने लगा, तब बालक महावीर जाकर उसे पकड़ लाये।

राजकुमार महावीर जब बड़े हुए तब एक बार उनको अपने पूर्वभव का ज्ञान हुआ।

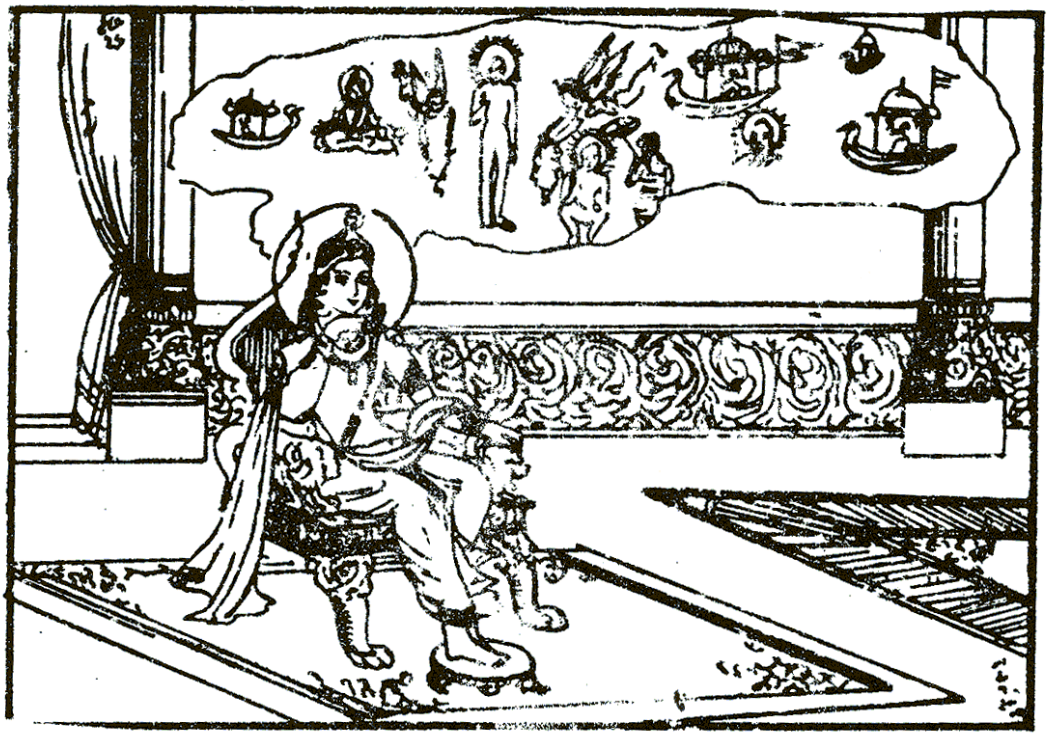

पूर्वभव का ज्ञान होते ही उनको बहुत वैराग्य जागृत हुआ जिससे वे दीक्षा लेकर मुनि हो गये।

उनको आत्मा की पहिचान तो थी ही। मुनि होने के बाद वे आत्मा का ध्यान करने लगे। आत्मा के ध्यान से उनके ज्ञान की शुद्धता बढ़ने लगी और राग छूटने लगा। ऐसा करते-करते सम्पूर्ण राग का नाश हो गया और पूर्ण ज्ञान प्रगट हुआ। इससे वे भगवान हुए अर्थात् अरिहन्त कहलाये।

इसके बाद उनका धर्मोपदेश होने लगा। उपदेश सुनने के लिए जीवों के झुण्ड के झुण्ड आये। स्वर्ग के देव आये और बड़े-बड़े राजा आये। आठ वर्ष के बालक भी आये और उन्होंने आत्मा को समझा। जंगल से सिंह आये, चीते आये, हाथी आये, बन्दर आये, बड़े-बड़े सर्प आये और छोटे-छोटे मेंढक भी आये और उन्होंने आत्मा को समझा।

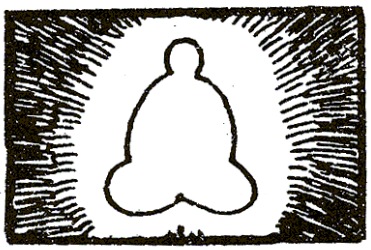

महावीर भगवान ने बहुत वर्षों तक धर्म का उपदेश देकर जैनधर्म का बहुत प्रसार किया। अन्त में वे पावापुरी से मोक्ष पधारे। पहले वे अरिहन्त थे, अब सिद्ध हो गये।

कार्तिक कृष्णा 14 की रात्रि के पिछले प्रहर में वे मोक्ष पधारे। इसीलिए सर्वत्र दीपावली-महोत्सव मनाया जाता है।

इस समय महावीर भगवान मोक्ष में विराजमान हैं, वहाँ वे पूर्ण आनन्द में हैं।

बालको ! महावीर भगवान की तरह तुम भी आत्मा को पहिचानो, राग-द्वेष को त्यागो और मोक्ष को प्राप्त करो।

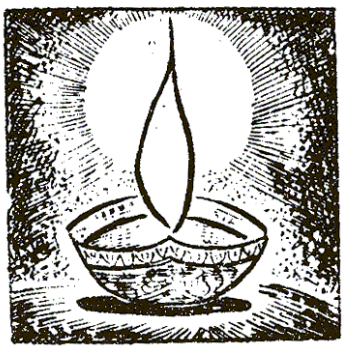

पाठ : 21

इतना करना

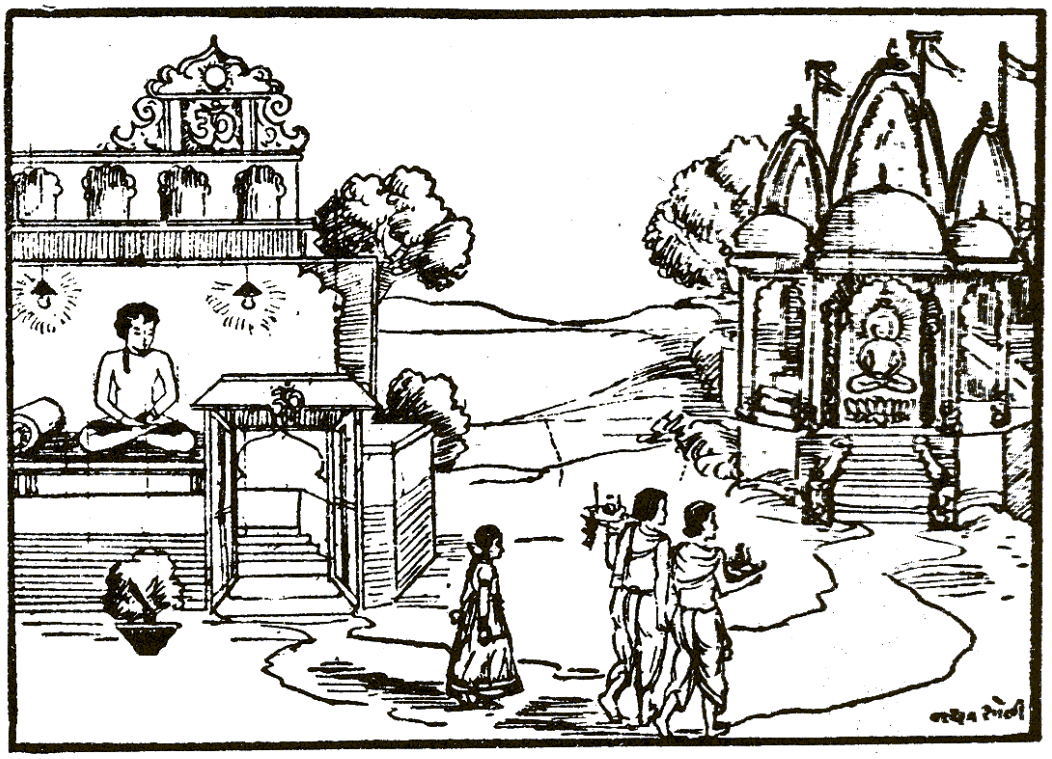

बालको ! सबेरे जल्दी उठना।

उठकर आत्मा का विचार करना,

प्रभु का स्मरण करना और नमस्कार मंत्र बोलना।

फिर स्वच्छ वस्त्र पहिनकर जिनमन्दिर जाना।

जिनमन्दिर जाकर भगवान के दर्शन करना।

इसके बाद शास्त्र जी को वन्दन करना।

और उनका पठन करना।

फिर गुरु जी के दर्शन करना, उनका उपदेश सुनना और सुनकर विचार करना।

हर रोज इतना करना।

ऐसा करने से तुम्हारा जीवन पवित्र होगा।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अच्छी-अच्छी शिक्षायें

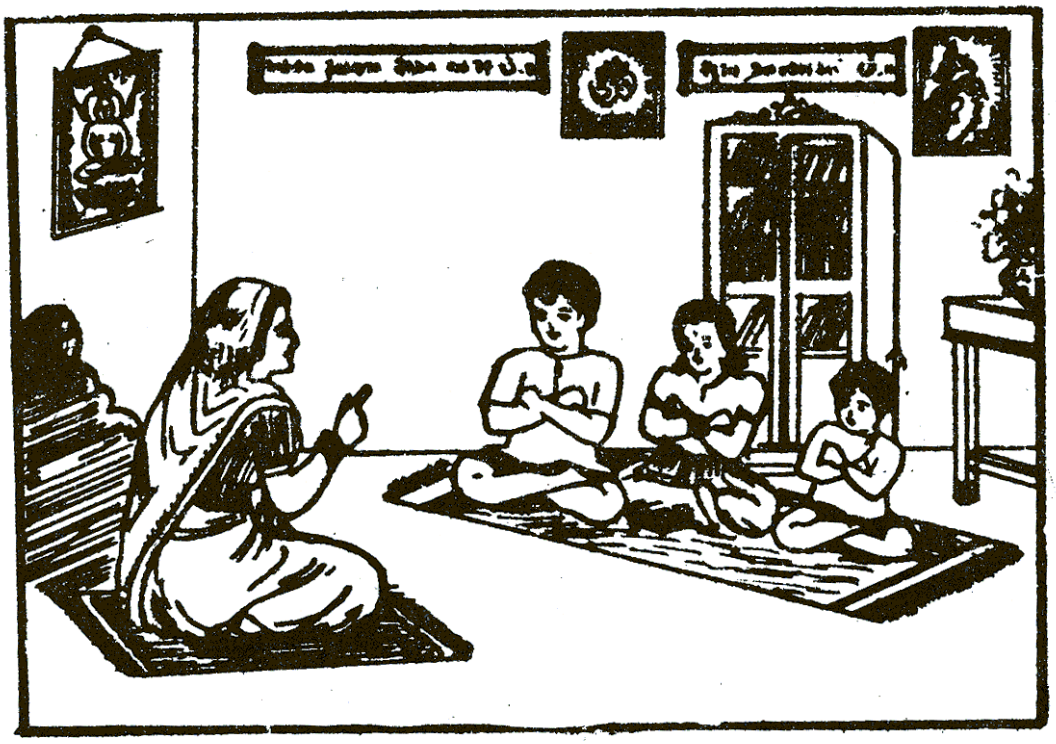

(1) आत्मदेव को कभी न भूलना,
हिंसा कभी नहीं करना।

(2) सिद्ध प्रभु को कभी न भूलना,
झूठी बात कभी नहीं करना।

(3) गुरु की स्तुति करना न भूलना,
चोरी कभी नहीं करना।

(4) शास्त्र जहाँ तहाँ कभी न रखना,
रात्रि-भोजन नहीं करना।

(5) सदा शान्त, सन्तोषी रहना,
ममता कभी नहीं करना।

(6) इन बातों को अवश्य मानना,
इसमें कभी भूल नहीं करना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

कभी....नहीं

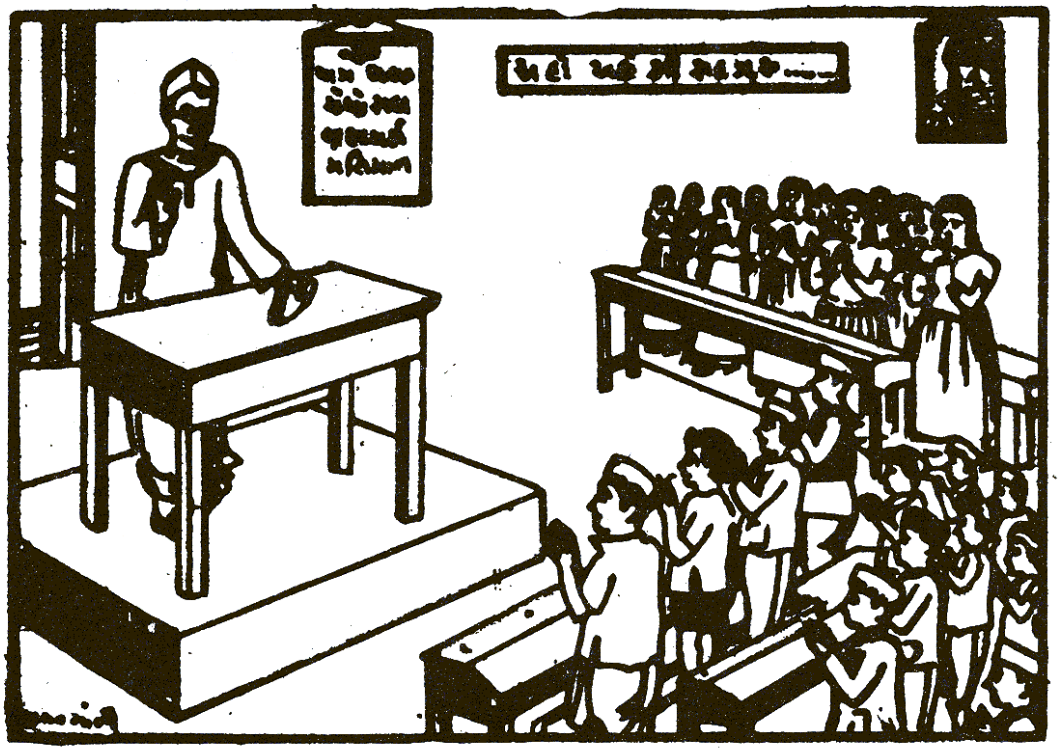

कभी धर्म नहीं छोड़ना।
कभी क्रोध नहीं करना।
कभी हठ नहीं करना।
कभी कपट नहीं करना।
कभी लालच नहीं करना।
कभी दया नहीं छोड़ना।
कभी भय नहीं करना।
कभी प्रमाद नहीं करना।
कभी जुआ नहीं खेलना।
कभी निन्दा नहीं करना।
कभी दोष नहीं छिपाना।

धुन

(1) सहजानन्दी शुद्ध स्वरूपी, अविनाशी मैं आत्मस्वरूप।

(2) स्व-पर-प्रकाशी ज्ञान हमारा, चिदानन्दघन प्राण हमारा।
स्वयं ज्योति सुखधाम हमारा, रहे अटल यह ध्यान हमारा॥

(3) देव हमारे श्री अरहन्त, गुरु हमारे निग्रन्थ सन्त॥

(4) अरिहन्त सदा जयवन्त रहो, चैतन्य सदा जयवन्त रहो।
गुरुदेव सदा जयवन्त रहो, जिनधर्म सदा जयवन्त रहो॥

(5) देह मरे भले मैं नहीं मरता, अजरामर मैं आत्मस्वरूप॥

वंदन

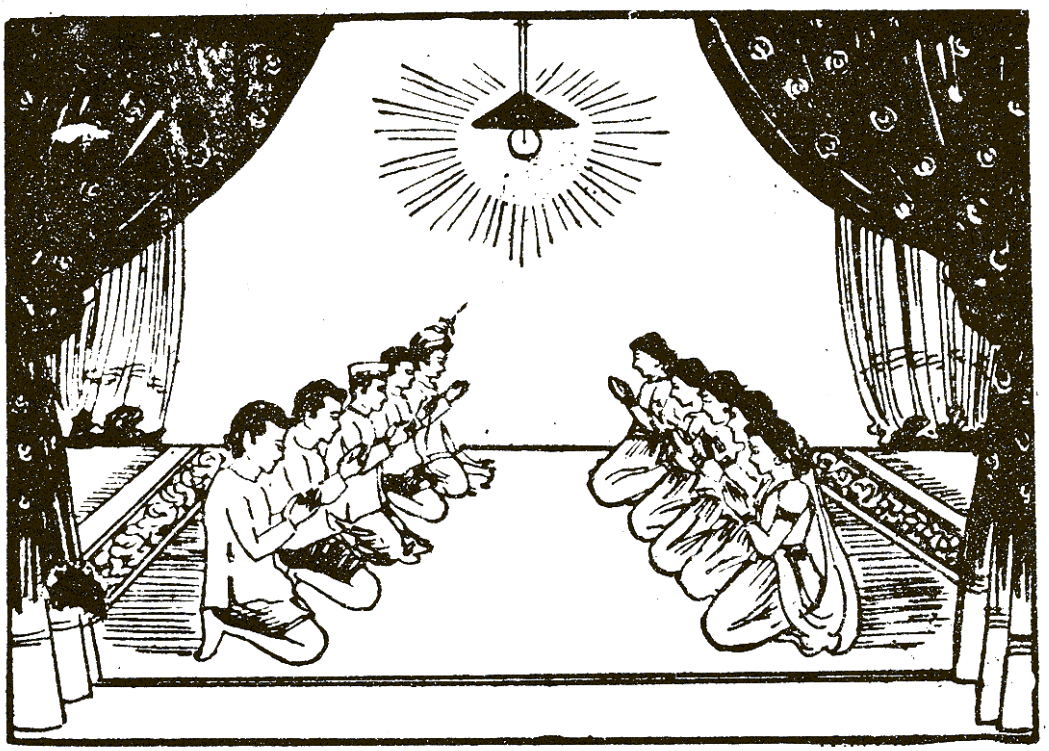

(1) वंदन हमारा प्रभु जी को तुम को।
वंदन हमारा गुरु जी तुम को॥ वंदन.॥

(2) वंदन हमारा सिद्ध प्रभु को।
वंदन हमारा अरिहन्त देव को॥ वंदन.॥

(3) वंदन हमारा सब मुनिवर को।
वंदन हमारा धर्म-शास्त्र को॥ वंदन.॥

(4) वंदन हमारा सब ज्ञानी को।
वंदन हमारा चैतन्य देव को॥ वंदन.॥

(5) वंदन हमारा आत्म-स्वभाव को।
वंदन हमारा आत्मप्रभु को॥ वंदन.॥

आत्म-देव

(1) मुझे देखना आतमदेव कैसा है ?
देव कैसा है, क्या करता है ? मुझे देखना. ॥

(2) वही देवाधिदेव, वही भगवान जो,
वही परमेश्वर कैसा है ? मुझे देखना. ॥

(3) जाने सभी विश्व, झलके सभी जहाँ,
दर्पण समान देव कैसा है ? मुझे देखना. ॥

(4) न्यारा है विश्व से, न्यारा है देह से,
आनन्द से एकमेक कैसा है ? मुझे देखना. ॥

(5) जन्मे मरे नहीं, राजा व रंक नहीं,
सागर आनन्द का कैसा है ? मुझे देखना. ॥

(6) आँखों दीखे नहीं, कानों सुनूँ नहीं,
ज्ञान में समाय, वह कैसा है ? मुझे देखना. ॥

मुझे बताओ

(1) बतला दो, वह आत्मा कैसा है ?
कहाँ कैसा है, कहाँ रहता है ? बतला दो. ॥

(2) जो जाने सभी को, देखे सभी को,
ऐसा वह आत्मा कैसा है ? बतला दो. ॥

(3) आप ही प्रभु है, आप ही सिद्ध है,
आप ही ज्ञान का दरिया है॥ बतला दो. ॥

(4) भिन्न शरीर से, भिन्न वचन से,
तो भी आनन्द से भरिया है॥ बतला दो. ॥

(5) जन्म विना का, मरण बिना का,
वह राग बिना का, कैसा है ? बतला दो. ॥

(6) जो आँखों दीखे नहीं, ज्ञान से दीखे।
मुझे उस जीव को देखना है॥ बतला दो. ॥

पाठ : 28

मेरी भावना

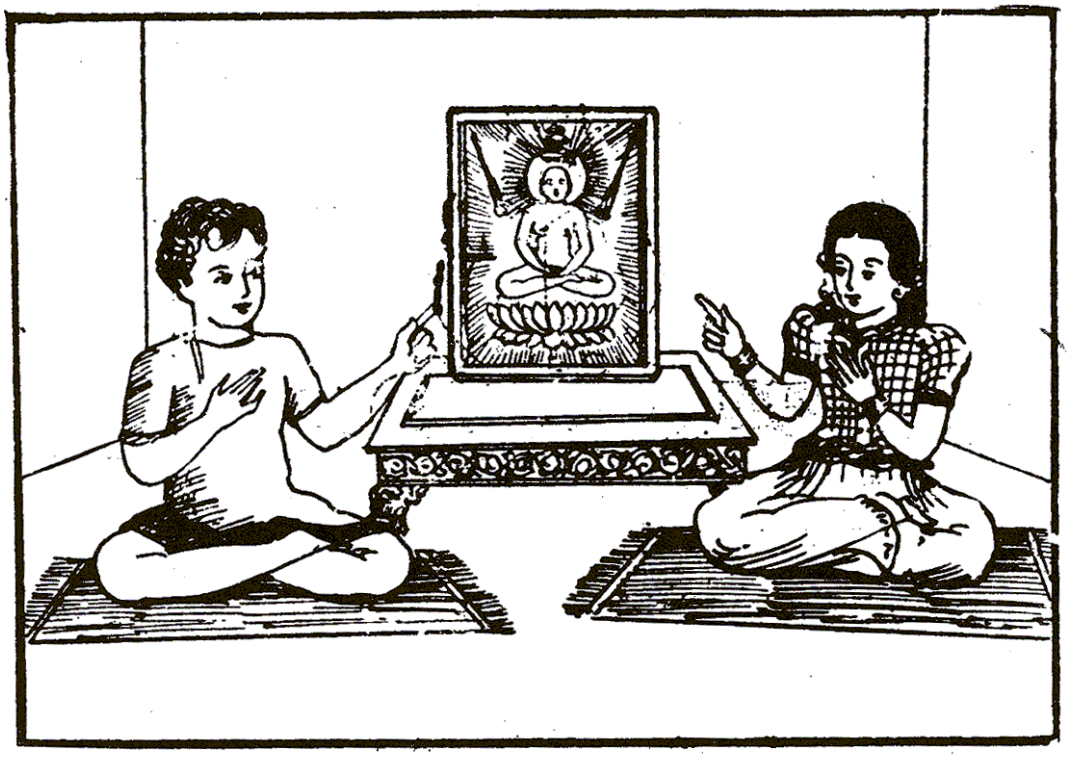

(1) मुझे प्रभु का दर्शन करना है।
मुझे आत्मा का दर्शन करना है।। मुझे.।।

(2) मुझे ज्ञानी की सेवा करनी है।
मुझे समझ सच्ची करनी है।। मुझे.।।

(3) मुझे पठन शास्त्र का करना है।
मुझे मोह-अँधेरा हरना है।। मुझे.।।

(4) मुझे वैराग्य सच्चा करना है।
मुझे संग मुनि का करना है।। मुझे.।।

(5) मुझे संसार से पार पाना है।
मुझे झटपट मोक्ष में जाना है।। मुझे.।।

मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ

(डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर)

मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण,
पर की मुझ में कुछ गन्ध नहीं।
मैं अरस अरूपी अस्पर्शी,
पर से कुछ भी सम्बन्ध नहीं॥

मैं रंग-राग से भिन्न, भेद से
भी मैं भिन्न निराला हूँ।
मैं हूँ अखण्ड चैतन्यपिण्ड,
निज रस में रमने वाला हूँ॥

मैं ही मेरा कर्त्ता-धर्ता,
मुझ में पर का कुछ काम नहीं।
मैं मुझ में रहने वाला हूँ,
पर में मेरा विश्राम नहीं॥

मैं शुद्ध, बुद्ध, अविरुद्ध, एक,
पर-परिणति से अप्रभावी हूँ॥
आत्मानुभूति से प्राप्त तत्त्व,
मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ॥